अनुभूति

सुधा ओम ढींगरा

चित्रा जी के साथ अविस्मरणीय पल

विकेश निझावन जी ने आग्रह किया कि चित्रा जी पर कुछ लिखूँ। चित्रा दी पर लिखना एक तरफ जहाँ मुझे रोमांचित कर रहा है, दूसरी तरफ अतीत के तालाब से समय के कमल तोड़ना जैसा है। चित्रा मुद्गल जी से मेरा परिचय बहुत पुराना है। मेरे मम्मी-पापा को पढ़ने का बहुत शौक था। घर में धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान ,सारिका, कादम्बनी, सरिता और कई पत्रिकाएँ नियमित आती थीं। मैंने पहले-पहल चित्रा जी को एक पत्रिका के पन्ने पर देखा था। वह पत्रिका मेरे मम्मी के हाथ में थी। और वे उसमें जो कहानी पढ़ रही थीं, उसके साथ लेखिका का चित्र भी छपा था। उस चित्र को देखती रह गई थी। माथे पर गोल बड़ी बिंदी। गम्भीर सौम्य चेहरा। आँखों में स्वाभिमान की चमक। होंठो पर स्नेह की धमक। एक ऐसा व्यक्तित्व जिससे ममता ही ममता छलक रही थी। नाम पढ़ा तो लिखा था चित्रा मुद्गल। मम्मी ने कहा था- 'बहुत अच्छी कहानीकार हैं।' उसके बाद तो आलम यह हो गया कि हर माह घर में आई हुई साहित्यिक पत्रिकाओं को खंगाल लिया जाता। चित्रा जी का लिखा जहाँ भी मिलता, पढ़ती और साथ छपे चित्र को निहारती। बचपन से ही नारी स्वाभिमान से ओत-प्रोत व्यक्तित्व मुझे हमेशा प्रभावित करते रहे हैं। बस चित्रा दी का साहित्य पढ़ती रही और उनके प्रति सम्मान बढ़ता गया। मैं उनके लेखन की भी कायल हो गई थी। पर कभी उन्हें मिल नहीं पाई।

अमेरिका आने के बाद पहले-पहल जब भारत गई तो सारिका के दफ्तर में अवध नारायण मुद्गल जी को तो मिली पर चित्रा जी से नहीं मिल पाई। वे उन दिनों मुंबई में थीं। उसके बाद मेरा जीवन ही चक्करघिन्नी सा घूमता रहा और चाहते हुए भी चित्रा जी से व्यक्तिगत तौर पर आमने-सामने बैठ बातें नहीं कर पाई। चित्रा जी दिल्ली आ गईं तो भी नहीं। प्रवासी लेखिकाओं की यही त्रासदी है कि वह तब तक अपना जीवन जी नहीं पाती जब तक पारिवारिक दायित्व कुछ कम नहीं हो जाते। दो सप्ताह की छुट्टी होती थी और भारत यात्रा का समय परिवार में ही सिमट कर सीमित हो वापिस लौटने का संकेत दे देता। बच्चा भारतीय संस्कृति को जान सके, पारिवारिक मूल्यों के महत्त्व को समझे और हिन्दी भाषा से प्यार करना सीखे। बस बेटे के साथ इन्हीं सब चुनौतियों से जूझते समय निकल जाता और अपने प्रिय साहित्यकारों से मिलना एक स्वप्न बनकर रह जाता। भारत की आगामी यात्रा तक फिर स्वप्नों की दुनिया सज जाती। यह भी पता होता था कि वे शायद साकार न हों। फिर भी स्वपनों की सुखद अनुभूतियाँ कभी छूटती नहीं थीं।

चित्रा दी का उपन्यास 'आँवा' आया। मैंने पढ़ा। डॉ. कमल किशोर गोयनका से उनका फोन नंबर लिया और उस उपन्यास पर लम्बी-चौड़ी बात मैंने उनके साथ फोन पर की। लगा नहीं पहली बार बात कर रही हूँ। ऐसा महसूस हुआ वर्षों से हम एक -दूसरे को पहचानते हैं। सही भी था मेरा ऐसा सोचना। किशोरावस्था से तो जानती थी उन्हें। लेखक से मुलाकात तो उसकी लेखनी से ही हो जाती है। धीर- गंम्भीर मधुर आवाज में उन्होंने उपन्यास पढ़ने के बाद मेरी जिज्ञासाओं, मेरी शंकाओं का समाधान बेहद परिपक्व तरीके से किया। उनके गहन दर्शन की झलक मुझे मिली। मुझे याद है उनसे फोन वार्तालाप के बाद मैंने माँ को याद किया था। काश! वे होती तो उन्हें सब बताती..... चित्रा जी के प्रति मेरे सद्भावों को वे जानती थीं।

बचपन में मुझे कहानियाँ सुनने का बहुत शौक था और मेरी प्रज्ञाचक्षु मौसी ने मेरे इस शौक को बढ़ावा दिया था। मुझे याद है, एक बार उन्होंने बताया था कि शिव का बेटा कार्तिकेय रथ लेकर धरती की परिक्रमा करता रहता है और लोगों की अच्छी माँगें सुनता है और उन्हें पूरा करता है और साथ ही उन्होंने कहा था-हमेशा अच्छा माँगना, कभी कुछ बुरा नहीं माँगना, वह सब सुनता है। चित्रा जी से फोन पर बात करने के उपरान्त शायद मैंने मन ही मन माँगा होगा कि वे हमारे घर आएँ तभी तो 2015 में ढींगरा फाउण्डेशन के साहित्यिक सम्मान समारोह में उनके कहानी संग्रह 'पेंटिंग अकेली है' को ढींगरा फाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान से सम्मानित करने के लिए उन्हें अमेरिका बुलाया गया और वे हमारे घर पर आईं। उनका रहने का इंतजाम होटल में किया गया था पर जब पंकज सुबीर जी से पता चला कि वे घर पर रहना चाहती हैं तो मेरे पाँव जमीन पर नहीं टिक रहे थे। ऐसा महसूस हो रहा था कि मैं हवा में उड़ रही हूँ।

लोकप्रिय कहानीकार, उपन्यासकार पंकज सुबीर (ढींगरा फाउण्डेशन के भारत में संयोजक), ज्ञान चतुर्वेदी, जो उपन्यास 'हम न मरब' के लिए ढींगरा फाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान प्राप्त करने आये थे और चित्रा दी उनके साथ आई थीं। रालेह-डरहम एयर पोर्ट से मेरे पति डॉ. ओम ढींगरा उन्हें लेकर घर आये तो घर में प्रविष्ट करते ही वे जिस आत्मीयता से मुझे मिलीं, उसे शब्दों से वर्णन करना कठिन है। कई एहसास ऐसे होते हैं, जिन्हें सिर्फ महसूस किया जा सकता है। अभिव्यक्त नहीं। चित्रा जी से मिलने की वर्षों से भीतर दबी साध पूरी हुई।

15 अप्रैल 2015 को अवध नारायण मुद्गल जी साहित्य जगत् को सूना कर गए। साथ ही सूना हो गया था चित्रा जी का संसार। वे बेहद उदास थीं, और सम्मान समारोह था 30 अगस्त 2015 को। वे सम्मान लेने इतनी दूर अमेरिका आना नहीं चाहती थीं। पंकज सुबीर के स्नेहिल आग्रह को वे मना नहीं कर पाईं। लम्बी यात्रा के हर दायित्व को उसने सँभालने का जिम्मा लिया। इस तरह वे हमारे पास पहुँच गईं। जिस मानसिक स्थिति में वे आईं थीं, हम सब उससे भली-भाँति परिचित थे। एक सप्ताह हमारे पास रहने के बाद जब वे गईं तो काफी सँभल चुकी थीं। माहौल का परिवर्तन और एक प्रशंसिका का साथ निस्संदेह उन्हें भी भाया था।

उनका धैर्य के साथ स्नेहपूर्वक बात को विस्तार से समझाना, उनकी बेहतरीन ड्रेस सेन्स, उनका मुस्कराता चेहरा, ममता उड़ेलती बड़ी-बड़ी आँखें अमिट छाप छोड़ गई हैं। ढेरों बातें जो हम सबने साझी की मेरी निधि हैं। चाहूँगी कि कार्तिकेय मेरी इच्छा फिर जान जाएँ और उन्हें दोबारा मेरे पास भेजें। ●

- sudhadrishti@gmail.com